4

मस्तिष्क में भाषा का निरूपण

यह लेख भाषा की प्रकृति के बारे में चॉमस्की की परिकल्पना के तहत कही गई कुछ बुनियादी बातों को बताता है: भाषा प्रजाति विशिष्ट है, भाषा का विकास वैसे ही होता है जैसे कि शरीर के अन्य अंगों का विकास। यह इन्सान की अन्तर्जात क्षमता है। इन्सान के मस्तिष्क में भाषा संकाय होता है जिसमें व्याकरण के सभी सिद्धान्त निहित होते हैं। जिस तरह शरीर के अंग अलग-अलग होते हैं लेकिन साथ मिलकर काम करते हैं उसी तरह दिमाग में भी अलग-अलग हिस्से हैं लेकिन साथ मिलकर काम करते हैं यानी मस्तिष्क की संरचना मॉड्यूलर है। लेख इस सन्दर्भ में चर्चा करता है कि भाषा संकाय में उपस्थित क्षमता सरल नहीं है। यह संकाय काफी जटिल नियम बनाने व उपयोग करने की क्षमता रखता है। इन सबका भाषा की प्रकृति व उसके शिक्षण पर गहरा असर है।

सबसे पहले मैं भाषा की प्रकृति के बारे में चन्द बुनियादी दावों का एक खाका खींचूँगा जिन्हें चॉमस्की शुरुआती बिन्दु मानते हैं। आप में से कुछ लोगों को इनके बारे में कुछ पता होगा। सबसे पुराने विचारों में से एक यह है जिसे वे आज भी दोहराना नहीं भूलते कि 'मनुष्यों के पास भाषा नामक कोई चीज़' मौजूद है, जो प्रजाति-विशिष्ट लगती है। यह कैसे? इसे समझने की शुरुआत हम तभी कर सकते हैं जब हम भाषा के अर्जन और भ्रूण में भुजाओं के विकास जैसी कुछ शारीरिक घटनाओं के बीच सादृश्य स्थापित कर सकें। आप जानते हैं कि माँ की कोख में बच्चे के विकास में एक अवस्था आती है जब उसमें कुछ उभार बनते हैं जो आगे चलकर भुजाएँ बन जाते हैं। उसमें कुछ मांसल रचनाएँ उभरती हैं, जो हृदय, फेफड़े वगैरह बनती हैं। ये सब जैविक घटनाएँ हैं और चॉमस्की जैसे भाषा वैज्ञानिकों का दावा है कि भाषा अर्जित करना एक जैविक घटना है। जन्म के समय मानव शिशु में भाषा अर्जन की

क्षमता पूर्व संरचित (Hard wired) होती हैं - यानी मस्तिष्क पहले से ही भाषा अर्जित करने के लिए तैयार होता है। मस्तिष्क में भाषा के विकास के लिए न्यूनतम शर्त एक चिंगारीनुमा उद्दीपन है - आपको किसी उद्दीपन की चिंगारी भर की ज़रूरत होती है। उदाहरण के लिए, यदि मनुष्य का बच्चा, जो भाषा की क्षमता के साथ पैदा हुआ है, उसकी परवरिश भाषा से किसी भी तरह के सम्पर्क से अलग-थलग की जाए, तो हो सकता है कि यह संकाय कभी विकसित न हो और शायद आगे चलकर यह बच्चा कभी भी भाषा अर्जित न कर सके। मगर यदि परिस्थिति ऐसी है जहाँ बच्चे के पास भाषा के कच्चे माल का इनपुट है, तो बच्चा भाषा अर्जित कर लेता है। भाषा का यह अर्जन पूरी मानव प्रजाति में लगभग एकरूप होता है। इसका बुद्धि जैसी किसी चीज़ से कोई लेना-देना नहीं होता। इसलिए हम कहते हैं कि यह एक जैविक घटना है। जिस तरह से इन्सान का कोई भी बच्चा, बशर्ते कि वह आनुवंशिक विकृति से ग्रस्त न हो, हाथ-पैरों और हृदय और ऐसी सब चीज़ों के साथ पैदा होता है, उसी तरह न्यूनतम चिंगारीनुमा उद्दीपन मिलने पर सारे मनुष्य भाषा अर्जित करने की क्षमता के साथ पैदा होते हैं। भाषा का यह अर्जन एक बार शुरू हो जाने के बाद एक स्व-निर्देशित व आन्तरिक रूप से अनुश्रवित प्रक्रिया है। बाहर से हम ज़्यादा कुछ नहीं कर सकते, पालक या शिक्षक इस प्रक्रिया में मदद या रुकावट पैदा नहीं कर सकते। और आप में से कई लोगों को यह बात पहले से पता होगी। भाषा अर्जन का यह नज़रिया तथाकथित अन्तर्जात परिकल्पना का मूल विचार है। तो यह **पहला विचार है कि भाषा या एक मायने में भाषा हासिल करने की क्षमता के सूत्र कैसे तैयार होते हैं।** मानव भाषा की जैविक बुनियाद का यह दावा चॉमस्की जैसे व्यक्ति के लिए बहुत उपयोगी साबित हुआ क्योंकि यह स्वाभाविक रूप से एक अन्य दावे, एक सार्वभौमिक व्याकरण के दावे, के साथ फिट हो गया। वैसे सार्वभौमिक व्याकरण की धारणा की उत्पत्ति चॉमस्की से नहीं हुई थी। बल्कि दार्शनिक लम्बे समय से इस बात पर विचार कर रहे थे कि एक गहरे अमूर्त अर्थ में सारी मानव भाषाओं में एक-सा पैटर्न नज़र आता है।

चॉमस्की से पहले दार्शनिकों ने एक सार्वभौमिक व्याकरण की धारणा का विकास कुछ इस तरह की धारणाओं के आधार पर करने का प्रयास किया था जैसे भाषा में शब्दों का क्रम दिमाग में विचारों के क्रम का अनुगामी होता है। यदि यह सही है तो इसका स्वाभाविक मतलब होगा कि सभी इन्सान एक-सा सोचते हैं। लिहाज़ा भाषाओं की संरचना एक-सी होनी चाहिए। मगर कुछ दार्शनिकों द्वारा अख्तियार किया गया यह रास्ता बहुत लाभदायक नहीं रहा क्योंकि वे विचारों के क्रम की धारणा में ज़्यादा ठोस तथ्य नहीं जोड़ पाए। और चॉमस्की ने किया यह है कि इसे दार्शनिक अटकलबाज़ी से दूर ले गए और एक आनुभविक आधार प्रदान किया।

तो यह है दूसरा विचार। मैंने जो पहला विचार प्रस्तुत किया था वह अन्तर्जात परिकल्पना का था। **दूसरा विचार है सार्वभौमिक व्याकरण का यानी एक व्याकरण है जो सारी मानव भाषाओं के मूल में है।** मुझे यकीन है कि आप इससे मतभेद ज़ाहिर करेंगे, हम इस पर फिर लौटेंगे। चॉमस्की पूर्ववर्ती दार्शनिक परम्परा से एक और मायने में भी अलग थे, मानव मस्तिष्क की प्रकृति के अपने नज़रिए में। आप जानते ही हैं कि मस्तिष्क की प्रकृति में इन्सानों की रुचि हमेशा से रही है। दार्शनिक युगों से इस सवाल पर बहस करते आ रहे हैं और फिर भी

शायद यह कहना उचित ही होगा कि इस सवाल में गहरी दिलचस्पी के बावजूद दार्शनिकों ने मानव मस्तिष्क को समझने में कोई खास तरक्की नहीं की क्योंकि दार्शनिकों का हठ था कि वे मस्तिष्क को एक इकाई यानी एक ही वस्तु के रूप में देखेंगे।

इसी लिए मानव मस्तिष्क को समझने की दिशा में आगे बढ़ना इतना ज़्यादा कठिन है। यदि आप इसे एक इकाई के रूप में देखते हैं तो आप कह रहे हैं कि दिमाग में बुद्धि नामक कोई चीज़ है जिसे समझा नहीं गया, और चूँकि उसमें बुद्धि है, इसलिए वह वे तमाम चीज़ें कर लेता है जो हम मानते हैं कि दिमाग करता है, जैसे अनुभूति से प्राप्त सूचनाओं की प्रोसेसिंग, तार्किक चिन्तन, याद रखना, भाषा का अर्जन और उपयोग, और विभिन्न अन्य बातें। ऐसा माना जाता है कि दिमाग ये सारी चीज़ें बुद्धि नामक किसी चीज़ की बदौलत करता है जिसे किसी ने आगे समझा नहीं है।

अब आप एक समान्तर स्थिति की कल्पना कीजिए जिसमें एक समुदाय है जिसने कभी मानव शरीर की चीरफाड़ नहीं की है और कभी यह नहीं देखा है कि मानव शरीर अंगों से मिलकर बना है। चूँकि उस समुदाय ने जीवित होना नामक गुण को भली-भाँति समझा नहीं है, इसलिए वह मानव शरीर को एक अविभेदित पिण्ड के रूप में देखने पर अड़ा है, जो वे सारे काम करता है जिसे मानव शरीर को करने चाहिए जैसे भोजन को पचाना, धड़कना, पसीना निकालना आदि। अब यह समुदाय, जिसने कभी मानव शरीर को चीरफाड़ करके देखा नहीं है और यह समझा नहीं है कि वह अंगों से मिलकर बना है, जिनके अपने-अपने कार्य हैं, हालाँकि ये अंग एक-दूसरे से अन्तर्क्रिया करते हैं और ये अंग ऐसे हैं कि प्रत्येक अंग अपनी विशिष्ट जैव-रासायनिक क्रियाओं द्वारा संचालित होता है, वह समुदाय मानव शरीर को समझने की शुरुआत भी नहीं कर सकता। मानव मस्तिष्क को लेकर हम इसी स्थिति में थे। आज हम चॉमस्की द्वारा नए रास्ते पर उठाए गए कदम से लैस हैं मगर इस मामले में भी वे इस विचार के जनक नहीं हैं। ऐसे कई समकालीन मस्तिष्क अनुसन्धान चल रहे थे जिनसे पता चल रहा था कि हमारे कई दिमागी कार्य मस्तिष्क में स्थान विशेष से जुड़े हैं यानी स्थानबद्ध हैं। मस्तिष्क के कुछ खास हिस्से हैं जहाँ दृष्टि की प्रोसेसिंग होती है, कुछ खास हिस्से हैं जहाँ किसी और चीज़ की प्रोसेसिंग होती है वगैरह। तो इस तरह के अनुसन्धान के नतीजे आ रहे थे और इसके परिणामस्वरूप और इसे आगे बढ़ाते हुए चॉमस्की ने दिमाग का मॉड्यूलर नज़रिया अपनाया। यह **तीसरा विचार है जो मैं प्रस्तुत करना चाहता था। दिमाग का मॉड्यूलर नज़रिया जिसके मुताबिक मानव मस्तिष्क एक अविभेदित इकाई नहीं है बल्कि मॉड्यूल्स से मिलकर बना है।** शरीर के अंगों के समान हर मॉड्यूल एक तरह से स्वतंत्र है मगर (अन्य मॉड्यूल्स के साथ) अन्तर्क्रिया करता है।

तो ये तीन विचार हैं, अन्तर्जात परिकल्पना, सार्वभौमिक व्याकरण का विचार और तीसरा मस्तिष्क की मॉड्यूलर संरचना। ये तीन विचार एक-दूसरे से अन्तर्क्रिया करते हुए एक सुसंगत समष्टि बनाते हैं। अब यदि मानव मस्तिष्क मॉड्यूल्स से बना है, तो चॉमस्की यह कह सकते हैं कि एक मॉड्यूल है जो भाषा के प्रति, भाषा के अर्जन के प्रति समर्पित है और यह इकाई,

सार्वभौमिक व्याकरण नामक यह अमूर्त चीज़ कहाँ स्थित है? वे कहेंगे कि यह भाषा संकाय (faculty of language) में स्थित है जो मानव मस्तिष्क का एक मॉड्यूल है। तो वे सार्वभौमिक व्याकरण को दिमाग के उस हिस्से के गुणधर्मों में, उसके परिपथों में स्थानबद्ध कर पाए जो भाषा को समर्पित है, जिसे भाषा संकाय कहते हैं। तो यह थी मानव भाषा की प्रकृति से सम्बन्धित चॉमस्की के भाषा-वैज्ञानिक विचारों की पृष्ठभूमि। अब मैं भाषा अर्जन के नज़रिए की बात पर आता हूँ। यहाँ मैं ब्लैकबोर्ड का उपयोग करूँगा।

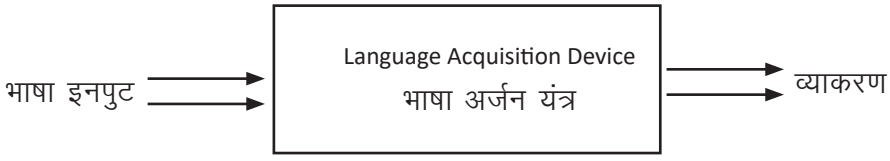

यह सरल-सा रेखाचित्र है जो वास्तव में खास कुछ नहीं कहता। बॉक्स का केंद्र LAD है जो Language Acquisition Device यानी भाषा अर्जन यंत्र का द्योतक है और दावा यह है कि बच्चा भाषा अर्जन साधन के साथ जन्म लेता है, जो भाषा संकाय के तुल्य माना जा सकता है। रेखाचित्र बताता है कि बच्चा भाषा अर्जन साधन के साथ पैदा होता है, परिवेश से भाषा के इनपुट्स प्राप्त करता है और परिणाम के रूप में आउटपुट एक व्याकरण होता है। मसलन, यदि बच्चे को इनपुट के रूप में चीनी भाषा दी जाए तो वह चीनी भाषा का व्याकरण विकसित कर लेगा यदि हिन्दी इनपुट मिले तो हिन्दी व्याकरण सामने आएगा।

अब इस चित्र की रोचक बात यह है कि इसके तीन हिस्से हैं। भाषा जो इनपुट है, उसके बाद भाषा अर्जन साधन है और फिर व्याकरण है जो दूसरे छोर पर बाहर निकलता है। और इस प्रक्रिया में प्रेक्षण योग्य, अवलोकन योग्य हिस्से शुरुआती व अन्तिम हिस्से हैं। जैसे आप इस बात का अध्ययन कर सकते हैं कि किसी बच्चे को किस तरह के भाषा इनपुट्स दिए गए। दरअसल, भाषा अर्जन अध्ययन की एक शाखा वह है जिसमें उस भाषा का अध्ययन किया जाता है जिसमें माँ अपने बच्चे से बात करती है, जिसे मदरीज़ (Motherese) कहते हैं। तो आप इसके इनपुट वाले हिस्से का अध्ययन कर सकते हैं, और दूसरे छोर से निकलने वाले उत्पाद - व्याकरण - का भी अध्ययन कर सकते हैं। व्याकरण का अर्जन क्रमिक होता है, शुरू में बच्चा निहायत प्रारम्भिक व्याकरण विकसित करता है जो धीरे-धीरे, ज़्यादा इनपुट्स मिलने के साथ, जटिल होता जाता है और अन्ततः वह प्रौढ़ व्याकरण हासिल कर लेता है।

आप देख ही सकते हैं कि प्रयुक्त भाषाविज्ञान (Applied Linguistics) के एक हिस्से में इन्सानी बच्चों के विकासमान व्याकरण का अध्ययन किया जाता है। आप इनपुट सूचना का अध्ययन कर सकते हैं, आप दूसरे छोर से निकले व्याकरण का अध्ययन कर सकते हैं मगर हम यह नहीं देख सकते कि भाषा अर्जन साधन के अन्दर क्या हो रहा है। भाषा अर्जन साधन एक ब्लैक बॉक्स ही है और चॉमस्कीयाना (यानी चॉमस्की के विचारों को मानने वाले) भाषा विज्ञानी यह पता करना अपना एक काम मानता है कि फलाँ-फलाँ सूचना प्रदान करने पर इस तरह का व्याकरण बाहर निकलता है तो भाषा अर्जन साधन के अन्दर

क्या हो रहा होगा। यह खुलासा करना भाषाविज्ञानियों का काम है कि भाषा अर्जन साधन के अन्दर क्या होता है।

चॉमस्कीयाना दावा यह है कि भाषा अर्जन साधन एक मायने में सार्वभौमिक व्याकरण का साकार रूप है, इस मायने में कि भाषा अर्जन साधन के अन्दर सार्वभौमिक व्याकरण के सारे तथाकथित सिद्धान्त निहित हैं। बच्चा अपने दिमाग में भाषा अर्जन साधन के साथ जन्म लेता है जो एक मायने में शुरू से ही सार्वभौमिक व्याकरण के सारे सिद्धान्त जानता है। मगर जब हम इस सन्दर्भ में जानना शब्द का उपयोग करते हैं तो हम एक निश्चित किस्म के ज्ञान की बात कर रहे हैं जो भौतिकी या इतिहास या ऐसे ही किसी विषय के हमारे ज्ञान से भिन्न है। यह सहजवृत्ति या जन्मजात (Instinctive) ज्ञान है, जैसे परिन्दों को घोंसला बनाने का ज्ञान होता है। यह सहजवृत्ति ज्ञान भाषा अर्जन साधन में उपस्थित होता है। चूँकि भाषा अर्जन साधन में यह सहजवृत्ति ज्ञान निहित रूप से स्थित होता है, इसे पता होता है कि मानव भाषा में कतिपय किस्म की संक्रियाएँ तो जायज़ संक्रियाएँ होंगी और इसके विपरीत कुछ किस्म की संक्रियाएँ जायज़ नहीं होंगी। हम में यह ज्ञान पैदाइशी है। इस मुकाम पर मैं आपको कुछ उदाहरण देना चाहूँगा।

चॉमस्की ने एक शुरुआती दावा यह किया था कि मानव भाषा का एक विशेष गुण यह है कि इसमें सारी व्याकरणिक संक्रियाएँ ढाँचा-आश्रित हैं, इसका मतलब है कि इन संक्रियाओं को एक सोपानबद्ध ढाँचे में स्थिति के आधार पर परिभाषित या व्यक्त किया जा सकता है न कि अन्य गुणधर्मों के आधार पर, उदाहरण के लिए, किसी रैखिक शृंखला स्थिति के रूप में। तो आप ऐसी संक्रियाओं के बारे में सोच सकते हैं जो स्थिति और रैखिक शृंखला पर निर्भर हैं। जैसे आप व्याकरण का एक नियम सोच सकते हैं जो दर्पण प्रतिबिम्बनुमा संक्रिया है। कोई दर्पण प्रतिबिम्ब संक्रिया कैसे चलती है? यदि शब्दों की एक शृंखला क, ख, ग पर यह नियम लागू करके नतीजा ग, ख, क निकले, तो यह दर्पण प्रतिबिम्ब संक्रिया है। या आप व्याकरण के किसी ऐसे नियम की कल्पना कर सकते हैं जिसमें किसी शृंखला के सम व विषम स्थान वाले शब्दों की अदला-बदली की जाती है। यानी इसमें सम संख्या वाली स्थिति के हरेक शब्द की अदला-बदली विषम संख्या स्थिति वाले हर शब्द से की जाएगी। अब सिद्धान्ततः तो ये सभी सम्भव संक्रियाएँ हैं, मगर मानव भाषा में ये संक्रियाएँ कभी नहीं होतीं। हालाँकि ये गणितीय संक्रियाएँ निहायत आसान हैं और शायद अवधारणा के लिहाज़ से बहुत सरल होंगी मगर मानव भाषा में इनका उपयोग कभी दिखाई नहीं देता। मानव भाषा तो मात्र ढाँचा-आश्रित नियमों, ढाँचा-आश्रित संक्रियाओं का उपयोग करती है। इसके परिणाम क्या होते हैं? मैं दो-तीन उदाहरण देता हूँ।

1 (क) जॉन तैर सकता है। (John can swim.)

1 (ख) क्या जॉन तैर सकता है? (Can John swim?)

2 (क) लड़का तैर सकता है। (The boy can swim.)

2 (ख) लड़का है सकता तैर। (Boy the can swim.)

कल्पना कीजिए कि अँग्रेज़ी सीख रहा मानव शिशु वाक्यों की पहली जोड़ी के सम्पर्क में आता है: 'John can swim' और इसका प्रश्नवाचक जोड़ीदार 'Can John swim?' सरसरी तौर पर देखने से नियम यह लगता है कि अँग्रेज़ी में प्रश्न बनाने के लिए दूसरा शब्द उठाकर पहले के स्थान पर रख दो, यानी पहले और दूसरे शब्दों की अदला-बदली कर दो। यह गणितीय किस्म की संक्रिया होगी। मगर मानव शिशु यह परिकल्पना कभी नहीं बनाता। दरअसल, इस तरह की जानकारी मिलने पर बच्चा कहीं अधिक जटिल परिकल्पना बनाता है - "मेरी भाषा में एक नियम है जिसमें प्रथम सहायक क्रिया को उठाकर उसे कर्ता संज्ञा पद के बाईं ओर रख देते हैं।"- जहाँ सहायक क्रिया, कर्ता संज्ञा पद वगैरह अवधारणाओं को स्थिति व ढाँचे, सोपानबद्ध ढाँचे और श्रेणियों के लिहाज़ से परिभाषित किया जाता है। ये निहायत पेचीदा अवधारणाएँ हैं मगर फिर भी बच्चा वाक्य के पहले और दूसरे शब्दों की अदला-बदली के अत्यन्त सरल नियम की बजाय कठिन नियम को चुनता है। नतीजतन जब बच्चे का सम्पर्क 'The boy can swim' जैसे वाक्य से होता है तो वह प्रश्न बनाते हुए 'Boy the can swim' जैसा वाक्य बनाने की गलती कभी नहीं करता। यह एक ऐसी गलती है जो कोई बच्चा, यहाँ तक कि दूसरी भाषा सीख रहा बच्चा भी, कभी नहीं करता। अर्थात कुछ ऐसी संक्रियाएँ हैं जिन्हें शुरू से ही बाहर कर दिया जाता है क्योंकि हम जानते हैं कि मानव भाषा में किस तरह की संक्रियाएँ हो सकती हैं और यह ज्ञान सहजवृत्ति ज्ञान है जो भाषा अर्जन साधन में अन्तर्निर्मित है।

अब हम जानते हैं कि भाषा इनपुट से सम्पर्क होने पर मानव शिशु अपनी भाषा का व्याकरण जल्दी ही विकसित कर लेता है। यह बहुत तेज़ी से होता है। और भाषा का अर्जन काफी तेज़ व आसान लगता है और यह बात सार्वभौमिक व्याकरण की प्रकृति तथा भाषा अर्जन साधन की प्रकृति की ओर संकेत करती है। इससे पता चलता है कि सार्वभौमिक व्याकरण तथा भाषा अर्जन साधन द्वारा अनुमतिशुदा संक्रियाएँ बहुत थोड़ी-सी और बहुत सीमित होनी चाहिए। यह निष्कर्ष कहाँ से निकला? मान लीजिए कि एक व्याकरण है जो 10 किस्म की संक्रियाओं की इजाज़त देता है और एक अन्य व्याकरण है जो मात्र तीन किस्म की संक्रियाओं की इजाज़त देता है। मैं व्याकरण के नियमों की बात नहीं कर रहा हूँ। मैं संक्रियाओं के प्रकारों की बात कर रहा हूँ। अब बच्चे को अपनी माँ से सूचना इनपुट मिलता है, जिसका विश्लेषण करके उसे उसका ढाँचा अर्जित करना है। ढाँचे का यह समूचा अर्जन अन्तर्निर्मित सिद्धान्तों के अनुसार अचेतन मस्तिष्क द्वारा किया जाता है। अब 10 संक्रियाओं वाले पहले व्याकरण में बच्चे को इस जानकारी का विश्लेषण 10 अलग-अलग ढंग से करके उसमें से सही विकल्प चुनना होगा। जिस व्याकरण में मात्र तीन किस्म की संक्रियाएँ हैं, उसमें बच्चे को इस जानकारी का विश्लेषण मात्र तीन तरह से करना होगा। अर्थात किसी भी भाषा के व्याकरण में यदि बड़ी संख्या में संक्रियाओं की छूट है तो बच्चे का काम अपेक्षाकृत कठिन होगा जबकि एक ऐसी भाषा में बच्चे का काम अपेक्षाकृत आसान होगा, जिसके व्याकरण सिद्धान्त में कम संक्रियाओं की अनुमति है। तथ्य यह है कि ऐसा लगता है कि दोनों बच्चों का काम आसान है। इससे पता चलता है कि सार्वभौमिक व्याकरण बहुत थोड़े किस्म की संक्रियाओं की अनुमति देता है। भाषाविज्ञानियों के सामने अब क्या काम है? हम नहीं जानते

कि सार्वभौमिक व्याकरण वाकई किस तरह की संक्रियाओं की अनुमति देता है। दरअसल हम नहीं जानते कि भाषा अर्जन साधन के अन्दर होता क्या है और यह पता करना हमारा एक काम है। चॉमस्कीयाना भाषाविज्ञानियों का मत है कि भाषा सिद्धान्त में जितनी कम संक्रियाओं की अनुमति होगी, व्याकरण उतना ही अच्छा होगा। *'आस्पेक्ट्स ऑफ दी थ्योरी ऑफ सिंटैक्स'* (1965) जिसमें चॉमस्की कहते हैं कि दुर्बलतम सिद्धान्त सर्वोत्तम सिद्धान्त होता है तो उनका आशय यही है। दुर्बलतम सिद्धान्त से उनका आशय ऐसे सिद्धान्त से है जिसमें अनुमतिशुदा संक्रियाओं की संख्या सबसे कम हो। सशक्त सिद्धान्त वह है जिसमें ज़्यादा किस्म की संक्रियाएं हों, दुर्बल सिद्धान्त वह है जिसमें संक्रियाओं की संख्या कम हो। और हमारा लक्ष्य सदैव दुर्बलतम सिद्धान्त होना चाहिए, शर्त यह है कि वह अनुभवों को अपने दायरे में समेट ले। अर्थात् उस सिद्धान्त में मानव भाषा की सारी प्रेक्षित, वास्तविक जानकारी का विवरण होना चाहिए। मगर हमें यह काम यथासम्भव कम से कम किस्म की संक्रियाओं के साथ करने की कोशिश करनी चाहिए।

अब आप जानते हैं कि पाणिनि के बाद और शायद पहले के व्याकरणविदों में भी व्याकरण में सरलता की एक धारणा मौजूद थी। हम अक्सर इस रूप में सोचते हैं कि एक व्याकरण की तुलना में दूसरे व्याकरण में कितने नियम हैं। यदि व्याकरण 'क' एक भाषाई परिघटना का वर्णन आठ नियमों की मदद से करे और व्याकरण 'ख' उसी परिघटना का वर्णन मात्र एक नियम से कर दे तो व्याकरण 'ख' को बेहतर व्याकरण माना जाता है। जब भी हम व्याकरण की सरलता की बात करते हैं तो प्रवृत्ति हमेशा नियमों की संख्या के लिहाज़ से सोचने की होती है। मगर सरलता का एक और अपेक्षाकृत गहरा अर्थ है जिसे ध्यान में रखना चाहिए, मतलब एक व्याकरण कितनी किस्म की संक्रियाओं की छूट देता है जो दूसरा व्याकरण नहीं देता। और मुझे लगता है कि सरलता की सचमुच महत्वपूर्ण बात वह है जो यह कहती है कि किसी भाषाई सिद्धान्त में कितनी किस्म की संक्रियाओं का सहारा लिया गया है, यहाँ ज़ोर नियमों की संख्या की बजाय किस्मों की संख्या पर है।

अब इस सबका शिक्षकों से क्या वास्ता? मेरे ख्याल से भाषा की प्रकृति और भाषा अर्जन की प्रकृति को लेकर इस चॉमस्कीयाना नज़रिए ने एक महत्वपूर्ण काम यह किया है कि बिम्बों में एक बुनियादी बदलाव ला दिया है। आप में से खासकर पुराने शिक्षकों को याद होगा कि अँग्रेज़ी या कोई भाषा उसकी संरचनाओं के रूप में सिखाई जाती थी। यानी विचार यह था कि किसी भी भाषा को संरचनाओं और शब्दों के रूप में विभक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, जैसे कक्षा 3 की पाठ्य-पुस्तकों में हम फलाँ-फलाँ संरचना और इतने शब्द सिखाएँगे और ये संरचनाएँ रेखीय ढंग से (एक के बाद एक) सिखाई जाएँगी। यानी पाठ 1 में एक संरचना सिखाई जाएगी, पाठ 2 में शायद उस संरचना को दोहराया जाएगा और शायद एक और संरचना जोड़ी जाएगी। उन दिनों में भाषा शिक्षण का यही आदर्श स्वरूप था। सीखने और सिखाने के परस्पर सम्बन्धों की एक सरल समझ थी। सोच यह थी कि जो सिखाया जाता है, वही सीखा जाता है। शिक्षण की पुरानी सोच में सिखाने और सीखने के बीच एक सीधा सम्बन्ध था और उसी के अनुरूप इस बात को लेकर भी एक सरल सोच थी कि जब

कोई चीज़ सीखी जाती है तो सीखने वाले के दिमाग में क्या चलता है। संरचना सूची के पीछे विचार यह था कि हर संरचना एक आदत है, एक किस्म की तेज़ पुनरावृत्ति है। भाषा शिक्षण का यह चित्र, इसके लिए जो बिम्ब आप सोच सकते हैं वह था, कोई इमारत या दीवार बनाने का। यही तो आप करते हैं, एक ईंट के ऊपर दूसरी और उसके ऊपर तीसरी रखते हैं। दीवार चुनने का यह बिम्ब संरचनावादी भाषा शिक्षण के लिए एकदम सही रूपक था। इस बिम्ब को अब खारिज कर दिया गया है और इसका स्थान हाथ-पैरों के विकास के चॉमस्कीयाना बिम्ब ने ले लिया है, यानी भाषा उपयुक्त हालात में विकसित होती है। मगर यह प्राकृतिक विकास है, और इस बात का शिक्षण पर क्या असर होगा? मेरा ख्याल है कि आप में से कुछ भाषा शिक्षक स्टीफन क्रेशन के काम से वाकिफ होंगे। स्टीफन क्रेशन ने एक किताब लिखी है, *दी इनपुट हायपोथीसिस* (1985) और इस छोटी-सी किताब के अन्तिम पैरा में वे एक दिलचस्प बात कहते हैं। वे कहते हैं कि मान लीजिए कि अमरीकी स्कूलों में आपको अचानक प्रान्त के शिक्षा अधिकारी का निर्देश मिलता है कि कक्षा 8 के बच्चों को एक निश्चित कद, जैसे 5 फुट 8 इंच या ऐसा ही कुछ, हासिल कर लेना चाहिए। और जैसे ही यह निर्देश मिलता है सारे शिक्षक अपने छात्रों को नापना शुरू कर देते हैं और कुछ बच्चे इस ऊँचाई तक पहुँच चुके हैं, कुछ इससे अधिक हैं और कुछ बदकिस्मत बच्चे वांछित कद से कम हैं। तो ऐसी परिस्थिति में शिक्षक उन बच्चों के लिए क्या कर सकता है जिनका कद ज़रूरी कद से कम है? शिक्षक यही कर सकता है कि उन्हें तानकर लम्बा कर दे, जो दर्दनाक भी होगा और बेकार भी। क्रेशन का कहना यह है कि कद की तरह भाषा का ज्ञान भी शिक्षक के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के योग्य नहीं है। ऐसी स्थिति में (यदि पहले पता होता कि ऐसा फतवा आने वाला है) शिक्षक यही कर सकता था कि उससे पहले के तीन-चार वर्षों में छात्रों की खुराक और व्यायाम पर नियंत्रण रखता ताकि वे निर्देशित ऊँचाई स्वाभाविक तौर पर हासिल कर लें। इसके अलावा शिक्षक कुछ नहीं कर सकता था।

इसी प्रकार से शिक्षक प्रत्यक्ष तौर पर छात्रों को भाषा सिखाने के लिए कुछ नहीं कर सकता। शिक्षक यही कर सकता है कि बच्चे को एक अनुकूल माहौल में रखे ताकि भाषा अर्जन साधन चालू हो जाए और उसे मदद मिले और वह स्वत: वह व्याकरण विकसित करे जो शिक्षक सिखाना चाहता है। अर्थात अब हो यह रहा है कि सिखाने और सीखने के बीच सम्बन्ध परोक्ष है। यह एक प्रत्यक्ष सम्बन्ध हुआ करता था, अब यह एक परोक्ष सम्बन्ध है। ज़रूरी नहीं कि भौतिकी या गणित पढ़ाने में भी यह सम्बन्ध परोक्ष हो, मगर एक किस्म के ज्ञान, उस किस्म का ज्ञान जिसे हम भाषा का ज्ञान कहते हैं, के मामले में यह सम्बन्ध परोक्ष ही रहना होगा।

स्रोत

- के ए जयसीलन, 2004, "लैंग्वेज रिप्रेज़ेंनटेशन इन दी माइंड", *ज्ञान का निर्माण*, पृ. 21-25, विद्या भवन सोसाइटी, उदयपुर।